शोध मंथन, Impact Factor 6.726 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255 (e): 2454-339X,
Vol. X, No.II, pp (389-398), April - June 2019

जल मंदिर : आस्था, संस्कार और सामाजिक सरोकार के केंद्र

डॉ0 डी0 के0 शाही
एसो0 प्रोफे0, डी. ए. वी. पी.जी. कॉलेज,
देहरादून
Email: drshahi.dehradun.india@gmail.com

सारांश

सदियों से हिमालय के दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों में उच्च सांस्कृतिक मूल्यों पर आधारित, परिस्कृत सभ्यताओं का अस्तित्व और उनकी उत्तरजिविता मानव और प्रकृति के उच्चतम अंतरसंबंधों के कारण संभव हुआ है। संस्कृतियों और सभ्यताओं ने प्रकृति के प्रति आस्था, विश्वास और सम्मान व्यक्त किया और संस्कारों में आबद्ध कर उस संस्कृति को पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित किया। इस आधार पर सभ्यताओं ने सतत विकास करते हुए प्रकृति के अनुरूप उन्नत संस्कृति का निर्माण किया।

दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों में विकसित हो रही संस्कृतियों और सभ्यताओं की पर्यावरण प्रबंधन की समृद्ध परंपरा रही हैं। इसका एक प्रतिरूप के नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) प्रबंधन के रूप में देखने को मिलता है। इन नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) के साथ सम्बद्ध आस्था, संस्कार और सामाजिक सरोकार ने परम्परागत जल संग्रहण की संस्कृति को जन्म दिया, जो आज भी अनुकरणीय है।

प्रस्तावना

अध्ययन का औचित्य

पर्वतीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) पीने के पानी का बड़ा स्रोत हैं। आज पेयजल का मुख्य स्रोत माने जाने वाले नौले–धारों में से आधे से ज्यादा में पानी की कमी आ चुकी है। जलस्तर घटने की यही गति रही तो आने वाले 10–15 सालों में करीब शत–प्रतिशत नौले–धारे विलुप्त हो जाएंगे।

प्रतुत शोध पत्र में आस्था और पर्यावरण के अंतर संबंध को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है, साथ ही प्रकृति संरक्षण में आस्था, संस्कार और सामाजिक सरोकार के महत्व और पारम्परिक ज्ञान की दीर्घकालिक वैज्ञानिकता के मूल्यांङकन का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य है; कुमाऊं क्षेत्र में स्थित नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) का अध्ययन करना और उनकी वर्तमान स्थिति को ज्ञात करना,

- नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) के विलुप्त होने के कारणों को जानना,
- नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) के विलुप्त होने के प्रभाव या परिणाम को जानना,
- नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) के प्रबंधन के परंपरागत तकनीक को जानना,

- नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) के विलुप्त होने के सन्दर्भ में प्रबंधन के परंपरागत और आधुनिक तकनीक का SWOT analysis करना.

विधितंत्र

प्रस्तुत शोध कार्य में समुदाय आधारित संसाधन प्रबंधन (जल प्रबंधन की परंपरागत पद्धति) का अध्ययन आपेक्षित था, अतः समुदाय आधारित प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन की पद्धतियों का संकलन (दस्तावेजीकरण) और परीक्षण, एकल अध्ययन, स्थानीय ज्ञान (बेस्ट प्रैक्टिसेज) का मूल्याङ्कन किया जाना अपेक्षित था।

वर्तमान अध्ययन द्वितीय सूचनाओं पर निर्भर है, सूचनाओं को विभिन्न प्रकार के दस्तावेजों जैसे रिपोर्ट, समाचार पत्रों, शोध ग्रन्थों, शोध पत्रों, संन्दर्भ ग्रन्थ और अन्य सूचनाओं/पुस्तिकाओं तथा इण्टरनेट से प्राप्त किया गया।

विश्लेषण

नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) को धारा या पन्यारा के नाम से जाना (उच्चारण किया) जाता है। नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) पर्वतीय क्षेत्रों में जन बासव और बस्तियों के विकास के महत्वपूर्ण कारक रहे हैं। नौले–धारों (वाटर–स्प्रिंग) से ही सुदूर ग्रामीण इलाकों के रहने वाले लोगों को पेयजल और दूसरी जरूरतें पूरी करने के लिए पानी मिलता है।

नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) का जलविज्ञान

धारा का तात्पर्य है, एक ऐसा स्थान है जहाँ किसी जलवाही चट्टान के नीचे से जलधारा सतह पर बह निकलता है। जलविज्ञान में धारा (वाटर–स्प्रिंग) धरती की सतह के उस स्थल को कहा जाता है जहाँ से भूजल भण्डार से पहली बार पानी का सतही बहाव होता है। अर्थात धारा (वाटर–स्प्रिंग) भूजल का प्राकृतिक सतही बहाव बिन्दु है। धारे से पानी तब निकलता है, जब बारिश का पानी मिट्टी द्वारा सोख लिया जाता है। मिट्टी द्वारा सोखा गया पानी ही भूमिगत जलश्रोतों को आपूरित करता है और मिट्टी के नीचे की सतह में मौजूद चट्टानों के ऊपर से रिसता रहता है।

इनपुट **आउटपुट**

शुद्ध, वर्षा जल ⟶ शुद्ध, पेय जल, सिंचाई का जल

नौला भूजल से जुड़ा एक ढांचा होता है। यह धारे (ऊपर के स्रोत) से प्राप्त जल को एकत्रित करने वाला एक छोटा सा कुण्ड होता है। नौला प्रायः ऐसे जलस्रोत पर निर्मित होता है जो निचली घाटियों के समतल ढलानों में स्थित होता है और पानी ऊंचाई से न गिरकर जमीन के भीतर से रिसकर बाहर आता है। नौलों का निर्माण केवल प्राकृतिक सामग्री जैसे पत्थर व मिट्टी से किया जाता है। मिट्टी और पत्थर से बने नौले का आधा भाग जमीन के भीतर व आधा भाग ऊपर होता है।

मूलतः यह बावड़ीनुमा संरचना है जिसे मंदिर की तरह दो या तीन ओर से बंद कर ऊपर छत डाल दी जाती है। नौलों के तल का आकार यज्ञवेदी का ठीक उल्टा होता है। पानी वर्गाकार सीढ़ीनुमा

बावड़ी में एकत्रित होता है। इन सीढ़ियों को पत्थरों से जोड़कर इस प्रकार बनाया जाता है कि पत्थरों के बीच की दरारों से रिसकर स्रोत का पानी बावड़ी में इकट्ठा होता रहे। पानी नालियों द्वारा नौले को बावड़ी तक पहुंचाया जाता है। वाह्य आकृति में यह मंदिर जैसा आकर्षक और सुंदर दिखता है। कहीं कहीं इसे मंदिरों के रूप में भी निर्मित किया गया है, इस लिए इसे जल–मंदिर भी कहा जाता है।

नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) के प्रकार

कुछ नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) साल भर पानी देती हैं जबकि कुछ नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) मौसमी हो गई हैं। बरसात के समय ही पानी दे पाती हैं। अगर भूजल रिचार्ज की तुलना में पानी का दोहन अधिक होता है तो बरसात के बाद नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) सूख जाया करते हैं।

जल प्रबंधन की प्राचीन परंपरागत पद्धति

कश्यप ऋषि को जल संरक्षण का सबसे बड़ा ज्ञाता माना जाता है। उनके द्वारा प्रतिपादित जल प्रबंधन की प्राचीन परंपरागत पद्धति में नौले–धारों (वाटर–स्प्रिंग) का रख रखाव के कुछ सिद्धांत थे, जो इस तरह हैं;

- पानी और जंगल को अलग नहीं किया जाए;
- पानी के वेग में बाधा न डाली जाए;
- तथा जितनी जरूरत है, उतना ही पानी प्रयोग किया जाए;
- पानी के स्रोत को पवित्र रखा जाए;

जल संरक्षण और संवर्धन के लिए समन्वित जल और भूमि उपयोग के प्रबंधन की जरूरत होती है। ऐसा माना जाता है कि मानसून के मौसम में अगर बारिश के पानी को संरक्षित कर भूजल–संरक्षण (ग्राउंडवाटर रिचार्ज) किया जाए तो नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) साल भर पानी देते रहते हैं।

जल के प्रवाह को रोकने के लिए धारे के जलग्रहण क्षेत्र (कैचमेंट एरिया) में सामान्यतः सघन वन लगाने और उसे संरक्षित रखने की प्राचीन परंपरा रही है। नौले के समीप वृक्षारोपण करना (चौड़ी पत्ती के वक्ष लगाना) भी परंपरागत जल प्रबंधन का हिस्सा है।

प्राचीन परंपरा के अनुरूप इन वनों को 'देव वन' के रूप में मान्यता मिलती है। धार्मिक आस्था के कारण उनका स्वतः संरक्षण होता रहता है। इस तरह सदियों से भूमिगत जल स्रोतों को आपूरित करने की वैज्ञानिक पद्धति को आस्था और विश्वास के माध्यम से प्रभावी रखा जाता रहा है। यह जल संग्रह की समृद्ध–प्रबंध–परंपरा का द्योतक है।

नौले–धारों के कैचमेंट एरिया को प्रदूषण से सुरक्षित रखा जाए तो इससे निकलने वाले पानी की गुणवत्ता बेहतर होती है, इस लिए हिमालयी क्षेत्रों में नौले को मंदिर के बराबर दर्जा दिया गया है। परंपरागत रूप से वहां मंदिर बनाया जाता रहा है। नौलों की स्वच्छता बनाए रखने के लिए हर नौले के पास एक मंदिर बनाने की परंपरा थी।

जल स्त्रोतों के रखरखाव और संरक्षण के साथ पानी और जंगलों के बीच सहजीवी

संबंधों को बनाए रखने और पानी के स्रोत को पवित्र रखने की यह परंपरा उत्तराखंड हिमालय के इन दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों में आज भी जीवित है। आज भी यह उसी आस्था, संस्कार और सामाजिक सरोकार के प्रासंगिक होने का प्रमाण है।

पारम्परिक ज्ञान की दीर्घकालिक वैज्ञानिकता और सामाजिकता

जल मंदिर की पूरी व्यवस्था (सिस्टम) सामूहिकता और पारस्परिकता पर आधारित है। सामूहिकता और पारस्परिकता पर आधारित यह व्यवस्था सदियों से सतत चली आ रही है। जल संग्रह का कार्य एकाकी कार्य नहीं है, यह सामूहिक प्रयास है। व्यवहारिक अर्थ में सामूहिकता का अर्थ है, सामूहिक प्रयासय अर्थात सामूहिक हित के लिए, सामूहिक प्रयास करना और सामूहिक प्रयास से सामुदायिक उद्देश्यों को प्राप्त करना। इस परंपरा का दूसरा आधार तत्व है पारस्परिकता। पारस्परिकता का अर्थ है, परस्पर एक दुसरे का सहयोग करना यह पारस्परिकता सामूहिकता के लिए प्रेरित करने का काम करती है, ताकि सामूहिक उद्देष्य प्राप्त हो सके। यह सामूहिक दायित्व की भवना जगाता है और सामाजिक नियंत्रण का भी कार्य करता है। सामूहिकता और पारस्परिकता में समानता और सम्बद्धता होती है। सामूहिकता और पारस्परिकता में सहयोग और निर्भरता होती है।

जल मंदिर की पूरी व्यवस्था इस बात का प्रमाण है कि इस आधार पर सभ्यताओं ने सतत विकास करते हुए प्रकृति के अनुरूप उन्नत संस्कृति का निर्माण किया। ऐतिहासिक प्रमाण हैं कि उत्तराखंड में परम्परागत रूप से वर्षा जल संरक्षण होता रहा है। संस्कृति और संस्कार से समन्वित संसाधन प्रबंधन संभव हुआ और प्राकृतिक प्रणाली की अधिकतम उत्पादकता सुनिश्चित हो सकी।

जन, जल और आस्था

नौला सिर्फ पानी का स्रोत नहीं है, इसके साथ एक समुदाय की आस्था भी जुड़ी होती है। नौले के जलस्रोत अत्यंत संवेदनशील होते हैं। इनके ढांचों में छेड़–छाड़ का परिणाम स्रोत के सूखने में होता है। इसलिए जल स्त्रोतों के रखरखाव और संरक्षण की ओर सभी ध्यान देते थे। सामूहिक या सामुदायिक स्तर पर उनके रख रखाव व पुनर्निर्माण का समुचित प्रबंध किया जाता था।

इस बात के पर्याप्त ऐतिहासिक प्रमाण हैं कि संस्कार और संस्कृति ने उत्तराखंड की परम्परागत जल संग्रहण प्रणाली को कायम रखा है। नौले–धारे की सामाजिक और धार्मिक आस्था आज तक जीवित है। आम–तौर पर पहाड़ के प्रत्येक गांव में नौला या कोई धारा होती ही है। गांव में जब भी कोई नई दुल्हन आती है तो उसे नौले तक ले जाते हैं। षंख ध्वनि की जाती है। नौले की पूजा की जाती है। इस तरह दुल्हन का नौले के साथ प्रथम साक्षात्कार होता है। इस अवसर पर स्त्रियां नौले से प्रार्थना करती हैं;

'स्यौ पूजा माई सीता देही, स्त्री पूजा माई उरमिणी
जलम–जलम ऐवांती सेवा, पिंहला ऐंपण थापि सेवा।'

(हे जल बावड़ी! सीता देही, उर्मिला देही तुम्हारी सेवा–पूजा कर रही है। उनकोजन्म–जन्मांतर सौभाग्यवती, पुत्रवती रखना, ...)नई दुल्हन को समझाया जाता है कि आज से पानी से भरा यह नौला तेरी जिन्दगी का अहम् हिस्सा बन गया है। अतः इसकी सुरक्षा का जिम्मा अब तेरा भी है। इसी सीख के कारण नौले–धारे सदियो से अब तक जिन्दा हैं।

यहां प्रायः सभी नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) के पास स्थित जल मंदिर आस्था, संस्कार और सामाजिक सरोकार के प्रतीक रहे हैं। नौला–पूजन की परंपरा भी उसी आस्था, संस्कार और सामाजिक सरोकार का प्रकट रूप है। निष्चय ही वैज्ञानिकता और अवैज्ञानिकता के इतर ज्ञान, आस्था और विष्वास के रूप में संचित रहता है और यह सामाजिक संस्कारों के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होता रहता है।

समृद्ध–प्रबंध–परंपरा

नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) हिमालयवासियों की प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और संवर्धन की समृद्ध–प्रबंध–परंपरा के प्रतीक हैं। हिमालयी क्षेत्र के मध्यवर्ती पहाड़ियों में जहां पानी की अपेक्षाकृत कमी है, जल संग्रहण की समृद्ध परंपराएं हैं। कुमाऊं में प्राचीन गढ़ियों, बसासतों के निकट ऐतिहासिक नौले अधिक संख्या में हैं। कुमाऊं राज्य की पुरानी राजधानी चम्पावत, सोर, सीराकोट, गंगोली, अल्मोड़ा नगर, द्वाराहाट क्षेत्र, कत्यूर घाटी सहित लगभग हर पुरानी बसासतों के निकट अनेक प्राचीन ऐतिहासिक नौले मौजूद हैं। यद्यपि अब नौलों व धारों की देखभाल ग्रामवासियों तथा सरकार द्वारा नहीं हो रही है, कहीं कहीं तो आज भी दो सौ से चार सौ वर्ष पुराने नौले ग्रामवासियों की प्यास बुझाने का काम करते हैं।

कुमाऊं के चंद राजाओं ने 1563 में अल्मोड़ा नगर को राजधानी के रूप में बसाया था। आज भी अल्मोड़ा नगर की परिधि में परंपरागत जल प्रबंधन का अनुपम उदाहरण देखने को मिलता है। अल्मोड़ा के निकट 14–15 वीं शताब्दी के लगभग निर्मित स्यूनराकोट का नौला आज भी मौजूद है। बावड़ी के चारों ओर बरामदा है, जिसमें प्रस्तर प्रतिमाएं लगी हुई हैं। मुख्य द्वार के सामने दो नक्काशीदार स्तम्भ बने हुए हैं। बावड़ी की अंडाकार छत स्थापत्यकला की कलात्मकता का अनुपम उदहारण है। यह अल्मोड़ा जनपद का सबसे प्राचीन एवं कला की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ नौला है।

कभी अल्मोड़ा नगर जल स्रोतों की दृष्टि से समृद्ध माना जाता था। यहां 360 नौले थे जो नगर की जलापूर्ति करते थे। इन नौलों में चम्पानौला, घासनौल, मल्ला नौला, कपीना नौला, सुनारी नौला, उमापति का नौला, बालेश्वर नौला, बाड़ी नौला, नयालखोला नौला, खजांबी नौला, हाथी नौला, डोबा नौला, दुगालखोला नौला आदि प्रमुख हैं। लेकिन अपनी स्थापना के लगभग 450 वर्षों बाद अल्मोड़ा के अधिकांश जल स्रोत इतिहास की धरोहर बन चुके हैं और वो अपनी अंतिम अवस्था में है।

बागेश्वर क्षेत्र की कत्यूर घाटी में अभी भी गाँवों में पुराने नौले जीवित हैं। सातवीं सदी के कत्यूरी राजाओं द्वारा निर्मित नौले यानी पेयजल की सर्वोत्तम तकनीक है। पेयजल की वह तकनीक, जो सदियों से कायम है आधुनिक तकनीकी के लिए चुनौती है।

चम्पावत का बालेश्वर नौला आज भी अपने पुराने वैभव की कहानी प्रस्तुत करता है। यहां बड़ी प्रस्तर शिलाओं पर सुंदर नक्काशियां उकेरी गयी हैं। इस पर उत्कीर्ण शिलालेख से ज्ञात होता है कि 1442 ई. में राजा कूर्मचंद ने इनका जीर्णोद्धार करवाया।

चम्पावत –मायावती पैदल मार्ग पर स्थित 'एक हथिया नौला' कुमाऊं की प्राचीन स्थापत्य कला का एक अनुपम उदाहरण है। यह नौला अनूठी कलाकृति के रूम में आज भी विद्यमान है। यहां देवदार और बांज के वृक्षों का घना जंगल है। इस नौले के निर्माण काल और निर्माणकर्ता के संबंध में कोई और जानकारी नहीं है। संभव है कभी यहां कृषि आधारित बस्तियां रही होंगी और यह किसी राजमार्ग के मध्य में पड़ता होगा।

चम्पावत के ग्राम डुंगरा का नागनौला सोपानयुक्त है। चम्पावत क्षेत्र में ही पाटण के नौले में गर्भगृह की दीवारों पर देवताओं की प्रतिमाएं बनी हुई हैं। संपूर्ण नौले में मनुष्य, जानवरों व पक्षियों के भी सुंदर अलंकरण हैं। नौले का निर्माण लगभग चौदहवीं–पंद्रहवीं सदी में किया गया था।

पिथौरागढ़ नगर के निकट जाखपुरान और थरकोट क्षेत्र में ऐतिहासिक नौलों की पूरी श्रृंखला मौजूद है। पिथौरागढ़ जिले के गंगोलीहाट क्षेत्रों में भी अनेक प्राचीन नौले हैं। गंगोलीहाट के काली मंदिर के निकट स्थित जान्हवी नौला 1263 ई. में राजा रामचंद्र देव द्वारा निर्मित करवाया गया था, जिसे अब काफी हद तक परिमार्जित किया जा चुका है। नौले के बरामदे की बाईं दीवार के एक चिकने पत्थर पर देवनागरी लिपि में एक अभिलेख उत्कीर्ण है।

बेरीनाग के निकट पुंगेश्वर का नौला बाहर से आवासीय भवन की तरह दिखता है। बालाकोट के पास हाट–बोर गांव का नौला इस क्षेत्र का सर्वश्रेष्ठ नौला है। स्थापत्य की दृष्टि से इसे उत्तराखंड का संभवतः सबसे सुंदर नौला कहा जा सकता है। यह अपने आप में एक संग्रहणीय धरोहर है। यह नौला आज भी गांव की पेयजल जरूरतों को पूरा करता है। हालांकि रख–रखाव की दृष्टि से इसकी हालत अच्छी नहीं कही जा सकती।

यह जल के प्रति प्राचीन संवेदनशीलता को प्रगट करता है। आज जरूरत इस बात की है कि इतिहास की इस महत्वपूर्ण धरोहर को न सिर्फ सुरक्षित रखा जाए, बल्कि गहराते जल संकट के बीच इसकी निर्माण तकनीक का भी संरक्षण व पुनरुद्धार किया जाए।

नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) की वर्तमान स्थिति;

स्थान	प्रमुख नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग)	वर्तमान स्थिति
अल्मोड़ा; 360 से अधिक नौले, इन नौलों में चम्पानौला, घासनौल, मल्ला नौला, कपीना नौला, सुनारी नौला, उमापति का नौला, बालेश्वर नौला, बाड़ी नौला, नयालखोला नौला, खजांबी नौला, हाथी नौला, डोबा नौला, दुगालखोला नौला आदि प्रमुख हैं।	स्यूनराकोट का नौला;लगभग 14–15 वीं शताब्दी में निर्मित, चंद राज की स्थापत्य कला की दृष्टि से श्रेष्ठ नौला, अल्मोड़ा जनपद का सबसे प्राचीन नौला, आज भी मौजूद है। यह जल के प्रति प्राचीन संवेदनशीलता को प्रगट करता है।	अल्मोड़ा के अधिकांश जल स्रोत इतिहास की धरोहर बन चुके हैं और वो अपनी अंतिम अवस्था में है। जल स्रोतों के संरक्षण व पुनरुद्धार की आवश्यकता है।
चम्पावत; बालेश्वर नौला, मायावती पैदल मार्ग पर स्थित 'एक हथिया नौला', डुंगरा का नागनौला, पाटण का नौला आदि प्रमुख हैं। इन नौलों का निर्माण लगभग चौदहवीं–पंद्रहवीं सदी में किया गया था।	बालेश्वर नौलाय राजा कूर्मचंद ने 1442 ई. में इनका जीर्णोद्धार करवाया था।	बड़ी प्रस्तर शिलाओं पर सुंदर नक्काशियां से युक्त यह नौला आज भी अपने पुराने वैभव को अभिव्यक्त करता है।
पिथौरागढ़य पिथौरागढ़ नगर के निकट जाखपुरान और थरकोट क्षेत्र में स्थित नौलों की श्रृंखला, गंगोलीहाट क्षेत्रों में स्थित प्राचीन नौले, बेरीनाग के निकट पुंगेश्वर का नौला आदि प्रमुख हैं।	जान्हवी नौलाय काली मंदिर, गंगोलीहाट के निकट स्थित, 1263 ई. में राजा रामचंद्र देव द्वारा निर्मित,	अब काफी हद तक परिमार्जित किया जा चुका है।
	बालाकोट के पास हाट–बोरगांव का नौलाय स्थापत्य की दृष्टि से इसे उत्तराखंड का संभवतः सबसे सुंदर नौला। आज भी यह नौला गांव की पेयजल जरूरतों को पूरा करता है।	जल स्रोतों के संरक्षण व पुनरुद्धार की आवश्यकता है।

नौले–धारों के सूखने के कारण;

एक समय था जब हिमालय के गांव हों या शहर, यहां पर समाज खुद अपने पीने के पानी की व्यवस्था करता था। वह राज्य या सरकार पर निर्भर नहीं रहता था। पूर्व में नौले–धारों (वाटर–स्प्रिंग) जल संग्रह किया जाता था, परन्तु समय बदलने के नौलों की पुरानी व्यवस्था की उपेक्षा की गयी।

पर्वतीय क्षेत्रों में सड़क निर्माण के लिये अवैज्ञानिक ढंग से पहाड़ को खोदा या काटा गया जिससे नौले–धारों पर बहुत नकारात्मक प्रभाव पड़ा। पर्वतीय क्षेत्रों में जंगलों के अंधाधुंध कटान, वनस्पतियों के अत्यधिक विदोहन या ह्रास भी इसका प्रमुख कारक है और–तो–और जंगल में आग लगने से चारों ओर की वनस्पति व झाड़ियां समाप्त हो गयीं, उनके जल–ग्रहण क्षेत्र भी संरक्षित नहीं है जिसके कारण इन नौलों के जलस्तर में गिरावट आ रही है व जल–ग्रहण क्षेत्र को स्वच्छ (पवित्र) नहीं रखने के कारण पानी प्रदूषित हो रहा है।

वस्तुतः, हाल के वर्षों में नौले–धारों (वाटर–स्प्रिंग) को कभी भी उतना महत्त्व नहीं दिया गया जितना मिलना चाहिए था। यहां तक कि इसकी मैपिंग तक नहीं की गई थी जिस कारण आधिकारिक तौर पर पता नहीं है कि इस क्षेत्र में नौले–धारों की संख्या कितनी है।

दूसरे, नौले–धारों को हमेशा पानी उपलब्ध करवाने में मदद करने वाले चाल–खाल रिचार्ज पिट या खाइयों की या तो अनदेखी कर दी गई या फिर इन्हें भर दिया गया। चाल–खाल

या रिचार्ज पिट या खाइयाँ बनाने की किसी को फ्रिक ही नहीं रही। इसका परिणाम यह हुआ कि नौले–धारों (वाटर–स्प्रिंग) सूखती चली गईं।

नौले–धारों (वाटर–स्प्रिंग) के सूखने की और भी कई और वजहें रही। उदहारण के रूप में, नौले–धारों में पीवीसी पाइप लगा दिए गए, इलेक्ट्रिक मोटर लगा दिए गए ताकि जल्दी–से–जल्दी जरूरत का पानी निकाल लिया जाए। वहीं, लोगों ने गहरे कुएँ भी खोदना शुरू कर दिया, रख रखाव में कमी नौले–धारों (वाटर–स्प्रिंग) के सुखाने का प्रमुख कारक है। इन सारी गतिविधियों ने नौले–धारों को बहुत नुकसान पहुँचाया।

नौले–धारों (वाटर–स्प्रिंग) के सुखाने का प्रभाव

नौले–धारों के सूख जाने से खेती लगभग नामुमकिन हो जाती है जिससे अन्न का उत्पादन घटता है। इस तरह की मुसीबतों से बचने के लिए इन क्षेत्रों से पलायन भी होता है। कभी–कभी पलयान इतनी बड़ी संख्या में होता है कि गाँव के गाँव खाली हो जाते हैं।

नौले–धारों को पुनर्जीवित करना;

नौले–धारे ऐसी जगहों पर मौजूद हैं जहाँ वाटर ट्रीटमेंट प्लांट से पाइप के जरिए साफ पानी पहुँचा पाना बहुत मुष्किल है। ऐसे में इन नौले–धारों के पेयजल के रूप में इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

नौले–धारों को बचाने के लिये ग्रामीणों को जागरूक करना बेहद जरूरी है। जो गाँव नौले–धारों पर आश्रित हैं उन गाँवों के लोगों को वाटर हार्वेस्टिंग एंड कंजर्वेशन के बारे में जागरूक करना चाहिए। जो पारम्परिक व्यवस्था है उनमें 40 से 60 फीसदी पानी की बर्बादी होती है। नौले–धारे के पानी को सतही जलाशय–रिजर्वायर बनाकर भण्डारण भी किया जा सकता है।

नौले–धारे (वाटर–स्प्रिंग) के जल–भरण क्षेत्र में सघन वृक्षारोपण द्वारा अच्छी वनस्पति, झाड़ियां आदि को पुनर्जीवित करना चाहिए। नौले–धारों के संरक्षण के विकल्पों और चाल–खाल, रिचार्ज खाइयों को वाटर रिचार्ज में प्रयोग किया जाना चाहिए नए चाल–खाल या रिचार्ज पिट या खाइयों के निर्माण करना चाहिए ताकि इनसे नौले–धारों को पानी मिलता रहे।

प्राकृतिक जल धाराओं व जलस्रोतों का संरक्षण करना अनिवार्य है।

सामर्थ

- हिमालय के कठिन भूगोल में रहने वाले लोगों का अनुभवजन्य ज्ञान,
- जलस्रोत के संरक्षण और संवर्धन का ज्ञान, (उसके परिस्थिति के अनुरूप, रखरखाव का ज्ञान, जलस्रोतों को सदा नीरा (सदाबहार) रखने का ज्ञान, जल की उपलब्धता के अनुरूप अपने जल संग्रह ढांचे के निर्माण का ज्ञान)
- आस्था और विश्वास से आबद्ध प्रकृति संरक्षण का परंपरागत ज्ञान (परंपरागत रूप से पर्वतीय क्षेत्रों में नौले–धारों (वाटर–स्प्रिंग) का रख रखाव व प्रबंधन को आस्था, विश्वास और परम्पराओं के साथ आबद्ध कर उसे संरक्षित रखा जाता रहा है)

दोश या कमियां

•प्रकृति की संवेदनशीलता और पवित्रता के प्रति आस्था का ह्रास और परम्पराओं के अनुपालन में कमी.

•संसाधनों का अवैज्ञानिक, अनियंत्रित और अत्यधिक विदोहन.नौला–धारा पद्धति को पुनः जीवित करने की योजनाओं में गंभीरता की कमी.

•भूजल–संरक्षण (ग्राउंडवाटर रिचार्ज) के प्रबन्धन की व्यवस्था की कमी, संरक्षण के प्रयासों में कमी.

संभावनाएं

•जलस्रोत का संरक्षण और संवर्धन (नौले–धारों (वाटर–स्प्रिंग) के जलग्रहण क्षेत्र को भी विकसित करना चाहिए ताकि इन नौलों में पानी की उप्लाब्द्धता बढ़ें और वह प्रदूषित भी न हो, इसके लिए चाल–खाल, रिचार्ज पिट या खाइयों के निर्माण के साथ ही और अधिक–से–अधिक वृक्षारोपण करना होगा.)

•जल–संरक्षण की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट ज्ञान और पीढ़ियों की जल–प्रबंधन दक्षता.

•नौलों की स्वच्छता बनाए रखने के लिए इन्हें मंदिर के बराबर महत्त्व की सुदीर्घ परंपरा.

•जल–ग्रहण क्षेत्र को पवित्र रखने का प्रयास (पानी के स्रोत को पवित्र रखा जाए;जल की शुद्धता और पवित्रता का प्रयास

•ग्रामीण समाज जीवन में नौला–पूजन की परंपरा (नौलों के निकट वृक्षारोपण भी परंपरागत जल प्रबंधन का हिस्सा है। इन वृक्षों में अधिकांशतः पीपल, जैसे छायादार, लंबी उम्र और धार्मिक रूप से पवित्र समझे जाने वाले वृक्षों को लगाया जाता है)

•सामूहिकता और पारस्परिकताय प्रकृतिक संसाधन प्रबंधन का सामूहिकता के द्वारा किया जाना चाहिए। वनों के संरक्षण के लिए समुदायों की भागीदारी आवश्यक है। स्थानीय समुदायों की अपने प्रकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में सहभागिता होनी चाहिए।

•जलागम क्षेत्रों को पुनः प्रतिष्ठित करने की आवश्यकता है. स्रोत संरक्षण व पुनरुद्धार के लिए जलागम क्षेत्रों को पुनः बहाल किया जाना चाहिए. (गाँवों में अब भी काफी हद तक सामुदायिक एकजुटता दिखती है. इसका उपयोग किया जा सकता है. श्रमदान से पुराने स्रोतों की सफाई कर उनको एक विकल्प के रूप में तैयार किया जा सकता है.)

•वर्षा जल संचयन के लिए समाज को स्वेच्छा से उत्साहपूर्वक आगे आना चाहिए.वर्षा जल संग्रहण का काम स्थानीय लोगों द्वारा सेवा की भावना से किया जाना चाहिए।

खतरे और नकारात्मक परिणाम

•प्रकृति की संवेदनशीलता (नौले के जलस्रोत अत्यंत संवेदनशील होते हैं. इनके ढांचों में छेड़–छाड़ का परिणाम स्रोत के सूखने में होता है.) अवैज्ञानिक, अनियंत्रित और अत्यधिक विदोहन से नौले–धारों की स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गई है।

पारम्परिक ज्ञान में दीर्घकालिक वैज्ञानिकता और सामाजिकता है जो उसके आज भी प्रासंगिक होने का प्रमाण है। स्थानीय लोक ज्ञान को समझ कर किया गया विकास कार्य कम नुकसानदायक होगा। इस दिशा में नीति–निर्माताओं, शोधकर्ताओं और विकास संस्थानों का भी सहयोग लिया जाना चाहिए। इन्हें नौले–धारों के प्रति संवेदनशील बनाना चाहिए ताकि कई कोणों और आयामों से नौले–धारों (वाटर–स्प्रिंग) का प्रबन्धन किया जा सके।

REFERENCES

1. Agrawal, D.P. 2007. *Traditional Knowledge Systems in Uttaranchal.* In Traditional Knowledge Systems and Archaeology. Eds. Agrawal et al. New Delhi: Aryan Books International.
2. Atkinson, E.T. 1980-81. *The Himalayan Gazetteer* Vols. 2, 3 .New Delhi: Cosmo Publication. (First published in 1884).
3. Bose, S.C. 1972. *Geography of the Himalaya*. New Delhi: National Book Trust, India.
4. Chopra, Ravi. 2007. *Water Resource Management Traditions in the Central – Western Himalayas.* In Traditional Knowledge Systems and Archaeology. (Eds.). Agrawal et al. New Delhi: Aryan Books International.
5. Joshi, M.P., A.C. Franger and C.W. Brown (Eds.). 1992-1993 *Himalaya: Past and Present* –Volume III . Almora: Shree Almora Book Depot.
6. Joshi, S.C. 2004. *Uttaranchal: Environment and Development.* Nainital: Gyanodaya Prakashan.

Kumar, Kirret and D.S. Rawat. 1996. Water Management in Himalayan Ecosystem: A Study of Natural Springs of Almora. New Delhi: Indus Publishing Company.